मानवीय मूल्यों के विघटन पर गहरी चिंताएँ व्यक्त हुई हैं। ये आलेख एक प्रकार से हमें विराट महाअस्तित्व की यात्रा से जोड़ते हैं।

मैं इस अंक के आलेख लेखकों के प्रति अपना आभार व्यक्त करता हूँ जिनके अकादमिक सहयोग से यह अंक अपना रूपाकार ले पाया है। विशेष कृतज्ञता उन सभी विषय विशेषज्ञों के प्रति ज्ञापित करता हूँ जिन्होंने इस अंक के आलेखों की समीक्षा के लिए अपना अमूल्य सहयोग प्रदान किया। आवरण चित्र के लिए ज्योतिका राठौड़ और आवरण सज्जा के लिए डॉ. मयंक शर्मा का सहयोग भी अभिनंदनीय है। अंत में इस अंक के प्रकाशन में सहयोगी समस्त जनों का आभार। आशा है इस अंक के आलेख पाठकों की रुचि के अनुकूल होंगे और शोधार्थियों को उनके शोध कार्य में सहयोग प्रदान करेंगे।

आपका

डॉ. नवीन नंदवाना

संपादक

अनुक्रम

1. फणीश्वरनाथ रेणु के रिपोर्ताज़ों में कृषक जीवन — 7
   प्रो. रसाल सिंह एवं प्रभाकर कुमार
2. हिंदी के आरंभिक उपन्यासों में स्त्री शिक्षा का स्वरूप ('देवरानी जेठानी की कहानी' व 'वामा शिक्षक' के संदर्भ में) — 18
   डॉ. मीता सोलंकी
3. अज्ञेय की काव्यालोचना (संदर्भ : भक्तिकाव्य) — 28
   डॉ. अखिलेश कुमार शंखधर
4. हिंदी उपन्यासों में निहित स्त्री विमर्श : एक दृष्टि — 36
   डॉ. बलजीत कुमार श्रीवास्तव
5. विराट अस्तित्व की महायात्रा का काव्य : 'एक समर्पित एकांत' — 43
   ध्रुव कुमार
6. मानवीय संवेदनाओं के कवि : नंद चतुर्वेदी — 49
   निर्मला शर्मा एवं डॉ. सरला शर्मा
7. 'हरी बिंदी' कहानी में नारी संवेदना — 56
   डॉ. प्रमिदा. के
8. जनवादी क्रांति के पक्षधर कवि : नागार्जुन — 59
   डॉ. प्रीति. के
9. सामाजिक संवेदना का पुंज : नंदकिशोर आचार्य का काव्य संसार — 66
   डॉ. मुकेश कुमार शर्मा
10. महादेवी वर्मा के रेखाचित्रों में सामाजिक सरोकार — 83
    डॉ. कुलदीप सिंह मीना
11. रामधारी सिंह 'दिनकर' की सांस्कृतिक दृष्टि (गद्य लेखन के विशेष संदर्भ में) — 91
    तरुण पालीवाल

12. मलयालम साहित्य में मिथक : एक झाँकी 99
डॉ. वीणा. जे

13. 'छुट्टी के दिन का कोरस' : स्मृतियों का आलाप 104
विष्णु कुमार शर्मा

14. मानवीय-मूल्यों के विघटन की गहरी चिंताएँ : कुमार कृष्ण की कविता 109
डॉ. वीरेंद्र सिंह

15. आंचलिक उपन्यासों की परंपरा 117
डॉ. सविता डहेरिया

16. फणीश्वरनाथ रेणु के कथा साहित्य में व्यंग्य 130
संजू शर्मा

17. नवजागरणकाल के संदर्भ में भारतेंदु का नाटक 'सत्य हरिश्चंद्र' का विश्लेषण 137
डॉ. संध्या. एस

19. यांत्रिकता के अंधमोह में दिशाहीन होते मध्यवर्गीय युवा 142
रीना कुमारी चौधरी

19. भारतीय साहित्य में सांस्कृतिक एकात्म 150
डॉ. राजेंद्र कुमार सिंघवी

20. मीरा के काव्य में भक्ति-भावना 155
डॉ. मनीषा शर्मा

21. प्रवासी महिला लेखिकाओं की कहानियों में संवेदना के स्वर (अमेरिका की प्रवासी महिला लेखिकाओं के विशेष संदर्भ में) 163
लतेश कुमारी

22. हिंदी कहानी की नई जमीन (संदर्भ : युवा स्त्री रचनाकारों का कहानी लेखन) 172
डॉ. नवीन नंदवाना

फणीश्वरनाथ रेणु के रिपोर्ताज़ों में कृषक जीवन

प्रो. रसाल सिंह* एवं प्रभाकर कुमार**

अक्षय करुणा और अतल-स्पर्शी संवेदना के धनी रचनाकार फणीश्वरनाथ रेणु हिंदी कथा साहित्य के साथ-साथ कथेतर साहित्य के भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण रचनाकार हैं। इन्होंने जहाँ 'मैला-आँचल' और 'तीसरी कसम उर्फ़ मारे गए गुलफ़ाम' जैसी कालजयी कृतियों का सृजन किया है; वहीं 'ऋणजल धनजल', 'नेपाल कथा-क्रांति' और 'समय की शिला पर' जैसे महत्त्वपूर्ण रिपोर्ताज़ों की रचना कर इस विधा को जीवंतता प्रदान की है। 'रिपोर्ताज' फ्रांसीसी भाषा का शब्द है जो अंग्रेजी के 'रिपोर्ट' शब्द का पर्याय है। इसका शाब्दिक अर्थ किसी कार्य या प्रतिवेदन का विवरण प्रस्तुत करना है। डॉ. हरदेव बाहरी ने भी "रिपोर्ट का शाब्दिक अर्थ (1) कार्य विवरण (2) विवरण, प्रतिवेदन (3) ज्ञातव्य बातों का विवरण माना है।"[1] रिपोर्ट के कलात्मक और साहित्यिक रूप को रिपोर्ताज़ कहते हैं जिसमें घटनाओं का यथातथ्य वर्णन हो। रिपोर्ताज़ का स्वरूप घटनापरक होते हुए भी सृजनात्मक और साहित्यिक होता है। इसमें मानवीय संवेदनाओं के साथ-साथ लेखक के दृष्टिकोण की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। अत: इसमें रचनाकार की घटना के भीतर उतरने की दृष्टि जितनी पैनी होगी, उसकी रचना उतनी ही अधिक विश्वसनीय और प्रामाणिक होगी। रिपोर्ट की कलात्मक अभिव्यंजना रिपोर्ताज़ को साहित्यिक बनाती है। रिपोर्ताज़ का संबंध वर्तमान से होता है, जिसमें रचनाकार उत्सव, मेले, बाढ़, अकाल, युद्ध और महामारियों

* प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग, जम्मू केंद्रीय विश्वविद्यालय, बागला, रायासुचानी, जिला-सोबा (J&K)
** शोधार्थी, हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग, जम्मू केंद्रीय विश्वविद्यालय

हिंदी कहानी की नई जमीन

(संदर्भ : युवा स्त्री रचनाकारों का कहानी लेखन)

डॉ. नवीन नंदवाना*

हिंदी कहानी आज लगभग सवा सौ वर्षों की यात्रा कर चुकी है। आज हम यदि कहानी के संपूर्ण परिदृश्य पर दृष्टि डालें तो पाते हैं कि आज विगत तीन-चार दशकों में हिंदी कहानी में कई युवा रचनाकार सामने आए हैं। ये लगभग पच्चीस से चालीस या कहें तो पचास वर्ष तक की आयु के हैं। इन दशकों में युवाओं में लेखन के प्रति रुचि बढ़ी है। वे समसामयिक जीवन के विविध विषयों को अपनी कलम के माध्यम से वाणी देने लगे हैं।

नीरज खरे अपने आलेख 'समकालीन युवा कहानी : स्मृतियों के भाष्य और यथार्थ का सवाल' के माध्यम से हिंदी कहानी के परिदृश्य के विषय में कहते हैं कि- ''हिन्दी कहानी में इन परिवर्तनों का समय, बीसवीं सदी के आखिरी दस-पंद्रह वर्षों के भीतर घटित हुआ। मौटे तौर पर इन बदलावों को भूमण्डलीकरण, सूचना क्रांति, बाजारवाद, उपभोक्तावाद, मीडिया के विस्तार के नाम से जानते हैं। इनके जितने गहरे पद चर्चित हैं- इनके बरक्स बदलाव के अनगिनत धरातल हैं। बीसवीं सदी के आखिरी दशक में राजनीतिक अस्थिरता और विसंगतियाँ साफतौर पर दिखायी दी हैं। रामजन्म भूमि बनाम बाबरी मस्जिद के आंदोलन, अयोध्या की घटना तथा सांप्रदायिक दंगों ने राजनीति समेत सामाजिक जीवन को व्यापक रूप से प्रभावित किया है। दूसरी तरफ मंडलवादी राजनीति ने देश में जातिवाद की समस्या में भारी उभार पैदा किया।

* सह आचार्य, हिंदी विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान) 313001

इसी दौर में भारतीय समाज में दलित और स्त्री-चेतना उत्कर्ष आंदोलन की तरह उभर आता है। वस्तुत: यही सब स्थितियाँ उस समय में कहानी की दशा और दिशा की निर्णायक हैं। इस समय की कहानी के विविध परिवर्तन, समय के तमाम बदलावों के साथ संबद्ध हैं। अत: इक्कीसवीं सदी के प्रथम दशक में हाजिर नयी युवा पीढ़ी की कहानी की रचनाशीलता को जानने-समझने हेतु, इसके ठीक पहले सक्रिय पीढ़ी की कहानी की ओर मुड़कर देखना होगा, जहाँ आज की युवा रचनाशीलता के प्रस्थान और नए प्रवर्तनकारी रचना-मूल्यों के उत्स छिपे हैं। यही नहीं पिछले से कतिपय भिन्न यानी नयी सर्जनात्मकता की पहचान भी इसके बिना संभव नहीं हो सकती।''[1]

युवा लेखकों को प्रोत्साहन देने में युवा लेखन पुरस्कार, प्रथम प्रकाशित कृति पर पुरस्कार, भारतीय ज्ञानपीठ का युवा लेखन पुरस्कार आदि ने भी युवाओं को लेखन से जोड़ने में अपनी महती भूमिका निभाई है। राजेंद्र यादव, रवींद्र कालिया आदि रचनाकारों ने इस दिशा में युवाओं को विशेष प्रोत्साहन दिया है। अशोक वाजपेयी अपने कार्यक्रम 'युवा' के माध्यम से भी युवा प्रतिभाओं को प्रोत्साहन देने का कार्य कर रहे हैं। विविध लेखिकाएँ यथा- मैत्रेयी पुष्पा, अलका सरावगी, चित्रा मुद्गल, नासिरा शर्मा आदि भी विविध सोशल मीडिया प्लेटफार्म पर और अन्य विविध कार्यक्रमों के माध्यम से युवा रचनाकारों और विशेष रूप से स्त्री रचनाकारों को प्रोत्साहित करती नजर आती हैं। इस सब बातों ने हमारे देश के युवाओं को हिंदी साहित्य सृजन की दिशा में बढ़ने के लिए उत्साहित किया है।

शर्मिला बोहरा जालान, वंदना शुक्ल, अनुपमा गांगुली, अंशु प्रधान, योगिता यादव, रजनी अनुरागी, जैसी युवा स्त्री लेखकों ने कहानी लेखन की दिशा में अपनी विशेष पहचान बनाई है। इनसे ठीक पहले की पीढ़ी की बात करें तो हम वंदना राग, मनीषा कुलश्रेष्ठ, प्रत्यक्षा, जयश्री राय, अल्पना मिश्र और योजना रावत जैसे स्त्री कहानीकारों का नाम ले सकते हैं। आज के दौर में इन्हें युवा कहानीकारों के मार्गदर्शक पीढ़ी और वरिष्ठ रचनाकारों का अनुकरण कर आगे बढ़ने वाली पीढ़ी के रूप में जाना जा सकता है।

शर्मिला बोहरा जालान एक युवा लेखिका है। जुलाई, 1973 में जन्मी शर्मिला बोहरा जालान ने कलकत्ता विश्वविद्यालय से एम.ए. और एम.फिल. किया। सन् 2001 में उनका पहला उपन्यास 'शादी से पेशतर' प्रकाशित हुआ। वे भारतीय भाषा परिषद के 'युवा पुरस्कार' से सम्मानित रचनाकार हैं। 'बूढ़ा चाँद' (2008) उनका प्रथम कहानी संग्रह है। संग्रह में 'आश्रय', 'परछाई', 'विदेशिनी', 'एक अपरिमित प्रलाप',

'स्वगत', 'मॉल मून', 'कॉर्नसूप', 'घोंसला', 'एक टूटी फूटी कहानी', 'विसर्जन', 'पलछिन', 'जकड़न', 'विकसित मैं' और 'बूढ़ा चाँद' कहानियाँ संगृहीत हैं।

संवाद और बातचीत की शैली में रचित इस कहानी संग्रह की कहानियाँ अपने समय के दिखावे और शान-ओ-शौकत से कुछ अलग प्रकार की हैं। ''इन कहानियों की लेखिका की ख़ास सिफत यह है कि आजकल की अनेक लेखिकाओं के बरक्स उसमें 'मरदाना' होने की जिद नहीं है और न ही ख़ास सुघड़ नजरिये से दुनिया को नापने का इरादा। बल्कि उनमें एक बच्ची की सी उत्सुकता और हैरानी है। कहानियों में लेखिका एक साथ बालिका, किशोरी और युवती के रूप में मौजूद है।'[2] इस संग्रह की कहानियाँ अपने आसपास के जीवन से छोटे-बड़े कई विषयों को उठाती हैं।

'मॉल मून' कहानी शहरों में पल-बढ़ रही मॉल संस्कृति को दर्शाने के साथ-साथ इस बात को भी बखूबी दर्शाती है कि मॉल में पड़ा अथाह सामान और महँगे ब्रांडस किस प्रकार व्यक्ति को अपनी ओर आकृष्ट करते हैं। मॉल की इस संस्कृति ने व्यक्ति के पहनावे के साथ-साथ खानपान को भी प्रभावित किया है। राहुल दिन में कई बार पिज्जा खाता है, यह इसी मॉल-संस्कृति की ही उपज है। मॉल-संस्कृति पर बात करते हुए राहुल नीना को बताता है कि- ''मॉल में लगता है हर आदमी मुझे ऊपर से नीचे तक अजीब तरह से तौल रहा है। वैसे देखो तो कोई भी घूरता नहीं है, फिर भी खुद को यह लगता है, हर आदमी अंदर तक भेद रहा है। लगता है मुझे यह बताना होगा, यह हिसाब देना होगा कि मैंने किस ब्रांड के कपड़े और जूते पहन रखे हैं। कौनसा डिओ लगाया है और कौनसा आफ्टर शेव।'[3]

वास्तव में मॉल के अंदर व बाहर का जीवन ही अलग है। बाहर के लोग प्राय: झुंझलाते, खीजते, चिड़ते मिलेंगे। वहीं अंदर काफी शांति और शोहरत लगती है। यह देखकर राहुल मजाक में ही सही अपनी पत्नी नीना से कह देता है कि वे उनका हनीमून मॉल में सामान खरीदते ही मनायेंगे। यह हनीमून नहीं मॉलमून होगा। बातों-बातों में वह नीना को अपने परिवार के हालात का भी यथार्थ ब्योरा दे देता है। जो वास्तव में केवल राहुल के परिवार का ही ब्योरा हो, ऐसा नहीं है। वह लगभग सभी मध्यवर्गीय परिवारों का लेखाजोखा और यथार्थ है। उसके पैरों के नीचे से जमीन तब खिसक जाती है जब राहुल यह भी बता देता है कि वह यह जानता है कि नीना उससे उम्र में बड़ी है। कहानी मध्यवर्ग के यथार्थ और मॉल-कल्चर दोनों को साथ लिए बढ़ती है।

संग्रह की कहानी 'कॉर्नसूप' भी इसी मॉल-संस्कृति के दुष्परिणामों को दर्शाती है। बंबई घूमने गए सुमन और राजीव के बहाने रचनाकार यह दर्शाना चाहती हैं कि मॉल के महँगे ब्रांड और चमचमाती वस्तुओं में इतनी ताकत होती है कि आम आदमी को अपने मायाजाल में फँसाते देर नहीं करती। सुमन और राजीव जब बंबई जाते हैं तो योजना होती है कि एलिफेंटा और प्रिंस ऑफ वेल्स घूमेंगे। कुछ मित्रों और परिचितों से मिलेंगे। किंतु वहाँ जाकर रजनी और विकास के साथ वे सिर्फ मॉल में समय बिताते हैं। उनका सारा पैसा सामान खरीदने में चुक जाता है। और तो और वे विकास से उधार पैसा लेकर भी खरीददारी करते हैं। यही उधारी उनके रिश्तों में तनाव लाती है। ''राजीव उसे ज्यादा जोर से बोला। विकास के सामने मैं उसे क्या कहता। सब तुम्हारा दोष है। औरतें होती ही ऐसी हैं। दुकानें देखकर पागल हो जाती हैं। हाय पैसा, हाय पैसा, लगा देती हैं।'[4] इस प्रकार कहानी आज के जीवन में आ रहे बदलाव को यथार्थ अभिव्यक्ति देती है।

'बूढ़ा चाँद' कहानी इस संग्रह की लंबी कहानी है। यहाँ एक बालिका गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर से संवाद करती है। वह विचित्र स्वभाव की बालिका उसी संवाद के माध्यम से बदल जाती है। बालिका की शरारतों व गालियों के कारण सब उसके साथ विचित्र-सा व्यवहार करते हैं किंतु उस वृद्ध से समय-समय पर हो रही बातें उसकी दुनिया ही बदल देती है। कहानी इस बात की ओर संकेत करती है कि प्रेम और सद्व्यवहार से सब कुछ बदला जा सकता है।

वैसे ही एक नया नाम है- सपना सिंह। स्त्री जीवन के विभिन्न मुद्दों को लेकर लिखने वाली इस युवा स्त्री कहानीकार ने प्रेम और मध्यवर्गीय स्त्री के जीवन से जुड़ी विविध बातों को अपनी कहानियों में प्रमुखता से उठाया है। अपनी 'डर' कहानी के माध्यम से इस रचनाकार ने स्त्री के खिलाफ हो रही हिंसा और यौनहिंसा जैसे विषयों को उठाया है। 'महिला लेखन की वर्तमान पीढ़ी : स्त्री लेखन, एक पुनर्पाठ' नामक अपने समीक्षा लेख में संजीव चंदन लिखते हैं कि- ''गीतांजलि श्री, अल्पना मिश्र, जय श्री राय, मनीषा कुलश्रेष्ठ और अनीता भारती के कथा संग्रह क्रमश: 'यहाँ हाथी रहते थे', 'कब्र भी कैद और जंजीरें भी', 'तुम्हें छू लूँ जरा', 'गन्धर्व गाथा' और 'एक थी कोटेवाली तथा अन्य कहानियाँ', हिंदी कथा-साहित्य की युवा पीढ़ी की लेखिकाओं के लेखन का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो पिछले 10-12 सालों में हिंदी साहित्य में प्रमुख रूप से दर्ज हुई हैं। हो सकता है कि इनमें से कोई शिल्प के स्तर पर ज्यादा महारत हासिल कर चुकी हो या कोई वर्तमान की राजनीतिक-सामाजिक जटिलताओं को दूसरे से बेहतर समझती हों, अभिव्यक्त करती हों, कोई अपनी जातीय

231

वर्गीय यथार्थ को सीधे-सपाट और गहरे जुड़ाव के साथ अपनी कथा में व्यक्त करती हो तो कोई इन यथार्थों को दूर से देखते हुए, भागीदार न होने की सीमा के कारण व्यक्त करने में कभी थोड़ा चुक जाती हों, लेकिन पाँच कहानीकार एक समूह के रूप में हिंदी के 'महिला लेखन' की युवा पीढ़ी की रचना-प्रवृत्तियों और उनके सरोकारों, उनकी शैली और कथ्य को प्रतिनिधित्व करती हुई मानी जा सकती हैं।''[5]

वंदना शुक्ल का कहानी संग्रह 'उड़ानों के सारांश' में कुल 11 कहानियाँ संगृहीत हैं। संग्रह की कहानी 'आखेट' रिश्तों की बुनावट व उलझावट दोनों को ही अभिव्यक्ति प्रदान करती है। मिट्टी के खिलौने बनाकर, नदी पार करके पास के कस्बे में उन्हें बेचने का काम करने वाले पिता की स्मृतियाँ भी उसके हृदय में सदैव ताजी रहती है। खिलौने बेचने के लिए पिता का एक दिन वापस न लौटना, उसके जीवन में बड़ा परिवर्तन ले आता है। पंचों की राय से उसकी माँ की दूसरी शादी हो जाती है। वह कभी भी उस दूसरे पुरुष को पिता के रूप में स्वीकार नहीं कर पाती है। इस दूसरे विवाह ने उसके जीवन को जरूर बदहाल कर दिया होता है। वह कहती है- ''मेरे नए पिता शराब के आदी थे और उनकी पहली पत्नी का देहांत हो चुका था। जब से उनसे माँ की शादी हुई थी, माँ का पिटना रोजमर्रा के जरूरी कामों में शामिल हो गया था। मैं और माँ उसके अभ्यस्त हो गए थे, माँ बिना बात पिटने की और मैं उन्हें बिना बात पिटते हुए देखने की।''[6]

दूसरे पति के साथ स्त्री-जीवन की नियति को भी रचनाकार ने साफ तौर पर लिखा है- ''फिर माँ रात में गायब होने लगीं। वह मुझे घर में ताले में बंद करके कहीं चली जाती और अलस्सुबह बिल्कुल निढाल हुई लौटती। आकर अपने पल्लू के छोर में से आले में पैसे रख देतीं, जिसे पिता सोकर उठकर गिनते और अपनी जेब में रख बाहर निकल जाते। जिस दिन आले में रखे पैसे पिता को नहीं मिलते उस दिन दारू के लिए वे तड़फ जाते और उस दिन माँ को कई बार पिटना होता।''[7] इस प्रकार कहानी आर्थिक तंगी झेल रहे परिवार की दुर्दशा को व्यक्त करती है। साथ ही नशे के दुष्परिणामों की ओर भी हमारा ध्यान खिंचती है। कहानी में संबंधों की खिंचावट है, स्त्री का शोषण है और पिता के साथ-साथ माँ को भी खो देने का अंतहीन दुख है।

वक्त के शोर में कला और संस्कृति किस प्रकार कहीं खो जाती है, कि ध्यान लगाकर सुनने पर भी उसकी कोई आहट तक महसूस नहीं होती। यह बात हम वंदना शुक्ल की कहानी 'आवाजें' में देख सकते हैं। छुट्टन मियाँ के हवाले से लेखिका ने

इसी कला व संस्कृति की खो रही आवाजों पर चिंता व्यक्त की है। छुट्टन मियाँ अपने बाप-दादा के दौर को याद करते हुए बताते हैं कि उनके परिवार में संगीत का कितना शानदार माहौल था। वक्त की मार ने उन सब कलाओं को चपेट में ले लिया था। छुट्टन मियाँ को चिंता है कि- ''धीरे-धीरे सब चले गए-बुजुर्ग, रस्मो-रिवाज, मिरासिने, महफिलें, रौनक, ठाठ-बाट, इज्जत, मेहमाननवाजी, किस्से बतोले, गप्पतें। अब तो बतौर गवाह फ़कत दो निशानियाँ बाकी बची थीं, एक जर्जर हवेली और दूसरे छुट्टन मियाँ।''[8] बीमारी की हालत में छुट्टन मियाँ अपने पुराने दिनों को याद करते हैं। उन्हें याद आता है कि किस प्रकार अपने अब्बू के बगल में बैठकर उन्होंने भी दरबारी कान्हड़ा में उनका साथ दिया था और कार्यक्रम के अगले दिन अब्बू के साथ उनकी भी तस्वीर अखबारों में छपी थी। उन्हें याद आता है कि किस प्रकार उनके घर में अख्तरी बाई फैजाबादी (बेगम अख्तर) की ठुमरी व उस्ताद बिस्मिल्लाह खान की शहनाई ने माहौल को खुशरंग बना दिया था, जब उनके घर बेटा हुआ था। उसे याद करते हुए आज बीमारी की हालत में भी वे गाने लगते हैं। तभी बेटा सलीम आकर कहता है- ''अब इस कदर दीवाने न होइए अब्बू कि धूप-छाँव का मतलब ही भूल जाइएगा, बड़बड़ाते अलग रहते हो। उसने उलाहते हुए कहा। ... कहाँ खो जाते हो आजकल अब्बू ? ये नई बीमारी हो गई है आपको या किसी रूह का साया है, बदन में ?''[9] छुट्टन मियाँ ऐसे में क्या बताते क्योंकि वे तो उस समय वक्त के शोर में गुम हो गई आवाजों को ढूँढ़ने का प्रयास कर रहे थे।

'उड़ानों के सारांश' नामक कहानी में कहानीकार वंदना शुक्ला ने एस.के. अवस्थी के बहाने जिंदगी की जंग लड़ रहे इंसान की कथा को वाणी प्रदान की है। उस व्यक्ति की मानसिक स्थिति क्या होगी जिसे डॉक्टर्स ने कह दिया हो कि वह चौबीस घंटे या चौबीस दिन या कुछ और दिन ही उसका जीवन बचा है। ऐसे ही हाल में एस.के. अवस्थी अपने जीवन के बीत चुके समय का स्मरण कर महत्त्वपूर्ण घटनाओं के माध्यम से मनुष्य के जीवन संबंधों के आकलन का प्रयास कर रहा है।

अस्पताल में भर्ती एस.के. अवस्थी को वहाँ का माहौल भी प्रभावित करता है। वह सोचता है कि किस प्रकार लोग यहाँ भर्ती हुए और कुछ ठीक होकर विदा हो गए और कुछ स्वर्ग लोक के लिए विदा हो गए। पारिवारिक संबंधों पर दृष्टि डालते हुए उन्हें लगता है कि- ''...बब्बन सबसे छोटा बीस बरस का है। दोनों बेटों और बेटी से छोटा और सबसे संवेदनशील। दोनों बेटे तो अपने परिवारों के साथ विदेश में है, लड़की कलकत्ते में। आकर देख भी गए हैं बाप को, सिर पर हाथ फेरकर 'पापा किसी बात की फिक्र मत करना जितने पैसे की जरूरत हो बताना।' दो-एक हफ्ते

282

रहकर अपने-अपने कर्तव्य निभा, वापस अपने-अपने घर चले गए हैं। किसी को नौकरी से छुट्टी नहीं मिली थी। किसी के बच्चों के एग्जाम थे। सही तो है ... कोई रहे भी तो कितना ? काम ही खतम हो गया होता तो सब निपटा-निपटू के निश्चिंत हो चले जाते पर कितना इंतजार करे भला कोई मौत का... मौत की कोई डेडलाइन नहीं होती क्या ?''[10] कहानी एक बीमार आदमी के हृदय में चल रही उधेड़बुन को सुलझाने, भावनाओं को अभिव्यक्ति देने का सशक्त प्रयास करती है।

मनीषा कुलश्रेष्ठ की कहानी 'कालिंदी' नारी जीवन की कटु यथार्थ का कच्चा चिट्ठा पेश करती है। जीवन चलाने की मजबूरी के खातिर देह व्यापार में लगी औरतों के जीवन के मार्मिक प्रसंगों को कहानी बेहतरीन तरीके से बयाँ करती है। जमुना सलुंके उस समस्त नारी जाति की कड़वी दास्तान कहती है, जो देह व्यापार में लिप्त होकर जीवन के जरूरी कामों के लिए दो-दो पैसे जोड़ती हैं। पीली इमारतों की एक शृंखला, दलाली करते प्रेमी या पति, सीलन व बदबूदार गलियाँ और औरतों के जिस्म उनकी बदहाली की कहानी कहने के साथ-साथ बचपन में जीती पीढ़ी के सुख सपने संजोने के खातिर किस प्रकार औरतें मजबूरी में देह व्यापार में संलग्न हो जाती हैं, उसकी कड़वी दास्तान है। यह समाज के एक ऐसी औरत की कड़वी कथा है, जहाँ कस्टमर का आना भी डरावना है और न आना भी। लेखिका लिखती है कि- ''कस्टमर शब्द उस गली के हम उम्र बच्चों के बीच एक डरावना शब्द था। एक पिशाच जो औरतों का गला दबाया करता था। औरतें उसकी गिरफ्त में कराहतीं थीं। एक पिशाच जिसके आने से.... कभी कटोरदान में रोटी कम पड़ जाती थीं या फिर.... बस्ती तो सब्जी या शोरबे के बिना ही खानी होती थीं।''[11] यहाँ हम उस मजबूरी को स्पष्टत: समझ सकते हैं कि पेट की आग के आगे मनुष्य को और यहाँ खासतौर पर स्त्री को कितने कड़वे घूँट पीने पड़ रहे हैं।

यहाँ का सच जानने पर बच्चा साफ तौर पर जमुना से कहता है कि हम यह इलाका छोड़कर कहीं और स्थान पर जाकर रहेंगे। अब सच्चाई जानने पर उसका जी घुटने लगा है, किंतु न चाहते हुए भी उन्हें वहीं गुजर-बसर करना पड़ता है। कारण कि किसी दूसरे इलाके में रहने के लिए मकान किराया चुकाने की स्थिति में वे नहीं है। वैश्या जीवन जी रही जमुना की माँ की हालत देख जमुना को पीड़ा होती है। वह कहती है कि- ''मैं देखती, माँ के बदन पर तरह-तरह के निशान, सिगरेट के जले सलेटी निशान, नीले-जामुनी निशान और बुरी तरह से डर जाती। मुझे माँ पर गुस्सा आता। यह बर्तन-झाड़ू क्यों नहीं कर लेती। दस-दस रुपये के लिए मर्दों से खुद को कुचलवाती क्यों है। मगर वह तो मुझसे भी यही उम्मीद लगाने लगी थी।''[12]

जमुना उस दलदल से तो पूरी तरह नहीं निकल पाती किंतु वह उससे मिलता-जुलता ही कुछ दूसरा मार्ग अपनाकर अपना गुजर-बसर करती है। आर्ट कॉलेज के कलाकारों के सामने अपनी न्यूड तस्वीरें बनवाती और उससे होने वाली आय से गुजारा चलाती। किंतु उस आर्टिस्ट को उस चित्र से जितना यश व धन मिलता, उसका कुछ अंश भी अपना सर्वस्व समर्पण करने वाली मॉडल को नहीं मिलता। ''जीवित मॉडल ही कलाकार के मास्टर पीस बनाने के लिए बड़ा माध्यम होती हैं लेकिन उन्हें वह सम्मान नहीं मिलता जो उन्हें मिलना चाहिए।''[13] इस प्रकार 'कालिंदी' कहानी जमुना की व्यथा-कथा के माध्यम से स्त्री जाति के एक विशेष वर्ग की पड़ताल कथा है।

अल्पना मिश्र समकालीन महिला युवा कहानीकारों में एक चर्चित नाम है। उनके अब तक प्रकाशित कहानी संग्रहों में 'भीतर का वक्त' (2006), 'छावनी में बेघर' (2008), 'कब्र भी कैद औ जंजीरे भी' (2012), स्याही में सुर्खाब के पंख (2017) प्रमुख हैं। 'छावनी में बेघर' उनका एक चर्चित कहानी संग्रह है जिसमें कुल आठ कहानियाँ- 'मुक्ति प्रसंग', 'मिड-डे मील', 'तमाशा', 'बेदखल', 'जिम्मी के सपने', 'लिस्ट से गायब', 'इस जहाँ में हम' और 'छावनी में बेघर' हैं। अल्पना मिश्र को हिंदी साहित्य में विशेष योगदान के लिए कई पुरस्कारों से नवाजा जा चुका है। उनमें शैलेश मटियानी स्मृति सम्मान (2006), परिवेश सम्मान (2006), रचनाकार सम्मान (भारतीय भाषा परिषद कोलकाता 2008), शक्ति सम्मान (2008) प्रेमचंद स्मृति कथा सम्मान (2014) वनमाली कथा सम्मान (2017) प्रमुख हैं।

अल्पना मिश्र की कहानी 'लिस्ट से गायब' पारिवारिक संबंधों के बुनाव व उलझाव की कहानी है। जहाँ औरत की शिक्षा व डिग्रियों की कीमत शादी से पहले तक ही आँकी जाती है। उसके बाद उसकी प्रतिभा का ब्यौरा केवल झाड़ू-चौकट और बिस्तर से ही मिलता है। ''डिग्रियों का महत्त्व सिर्फ शादी के पहले तक होता है। शादी के बाद से डिग्रियाँ आपके दिन-रात के काम में नुक्स निकालने के काम आती है। मेहमानों से बातचीत करने में तौर-तरीकों से लेकर बरतन माँजने तक में ये डिग्रियाँ आपके पीछे पड़ती रहती हैं।''[14]

अफसर पति की पत्नी बनकर आई स्त्री को भी यह सोचना पड़ता है कि- ''क्या हैं वे उस घर में ? उस अपने घर में ? गृहलक्ष्मी, गृहस्वामिनी, महरी, दासी, एक निकृष्ट जीव ? जिसके बारे में फिक्र करने की किसी को कोई जरूरत नहीं।''[15] वह स्त्री ऐसे जीवन में बदलाव चाहती है। स्वयं के पैरों पर खड़ा होना चाहती है। वह उन संघर्षों पर विजय पाना चाहती है। स्वयं कष्ट सहनकर वह एक नौकरी के

लिए साक्षात्कार देने जाती है। पढ़ाने के बदलाव के, व्यवस्था में सुधार करने के अपने अनुभव बताती है किन्तु योग्यता के बावजूद उसके सपनों की बलि चढ़ा दी जाती है। उसका नाम चयनितों की लिस्ट में नहीं होता है। इस प्रकार सब कुछ प्रयास करने के बाद भी वह लिस्ट से बाहर हो जाती है।

अल्पना मिश्र की कहानी 'इस जहाँ में हम' एक नौकरी पेशा स्त्री की कहानी है। कहानी में अल्पना मिश्र ने इस यथार्थ का उद्घाटन किया है कि नौकरीपेशा स्त्री को अपने कार्यस्थल पर किन-किन परेशानियों का सामना करना पड़ता है। साथ ही साथ घर-परिवार के जिम्मों को निभाने की चिंता उसे हरदम बनी रहती है। पति के समकक्ष ही अर्थोपार्जन करते रहने पर भी वह किस प्रकार जीवन के हर छोटे-मोटे निर्णय के लिए पति पर निर्भर रहती है। इस जहाँ के सारे दायित्व निभाते हुए भी उसे हरदम यह लगता है कि इस जहाँ में वो कहीं है ही नहीं।

कार्यालय में कार्यरत साथी पुरुष स्टाफ को लगता है कि जब वे पूरी तनख्वाह लेती है तो काम भी पूरा करें। घर परिवार वालों को भी लगता है कि नौकरी के दायित्वों के साथ-साथ वे घर के दायित्व भी बखूबी निभाए। साथी पुरुष कर्मचारियों के विचारों को लेखिका ने कहानी में इस प्रकार अभिव्यक्ति प्रदान की- ''नौकरी करेंगी साथ में, जाएँगी साथ में, पैसा लेंगी बराबर का और साथ बैठने में सती-सावित्री बनने लगेंगी। या फिर नौकरी क्यों कर रही हैं ? इतने नखरे तो घर बैठे।''[16] इस प्रकार की बातें हम लोकजीवन में सुन सकते हैं।

नौकरी के साथ-साथ घर परिवार की गाड़ी चलाते-चलाते स्त्री किस कदर थक जाती होंगी, इस बात कर अनुमान दूसरे शहर में नौकरी कर रहे पुरुष पति को नहीं होता है। वह तो अपने पुरुष व घर के मालिक होने पर अहसास उसे बार-बार करवाता रहता है। ''उनका स्पष्ट निर्देश या कि छोटे से छोटा खर्च भी डायरी में नोट किए जाए। आलू, प्याज, टमाटर, आटा-दाल, दर्जी, रिक्शे का किराया, बच्चों की पेंसिल, रबड़ बगैरह।''[17] जब वह घबराकर एक मोबाइल फोन खरीद लेती है तो उसे कई तानें मिलते हैं। स्पष्ट है कि स्त्री को अपने विवेक से निर्णय करने का अधिकार हमारा समाज नहीं देता है। अपनी हर छोटी-बड़ी जरूरत के लिए भी उसे पुरुष की ओर मुखापेक्षी होना पड़ता है। पति की नजर अपनी स्त्री के मोबाइल पर लगी रहती है। भले ही उसके स्वयं के मोबाइल में हजार नंबर हों, पर पत्नी से वो दो-चार कांटेक्ट नंबर के लिए भी हजार सवाल पूछता है। इतना ही नहीं, वह अपने घर के लिए सब कुछ न्योछावर करने वाली उस स्त्री पर आरोप लगाने से भी नहीं चूकता।

इसी कारण ऑफिस से बॉस का फोन आने पर भी वह बड़ी आसानी से आरोप लगाते हुए कह देता है कि- ''किसी यार का होगा।''[18] आजादी के 70 साल बाद भी इस तरह की घटनाएँ व स्थितियाँ हम अपने घरों व पास-पड़ोस से देख सकते हैं।

योजना रावत की कहानी 'पे पैकेज' आज के दौर के जीवन के यथार्थ का उद्घाटन करती है। कहानीकार इस कहानी के माध्यम से यह बताना चाहती हैं कि आज के दौर में मनुष्य को उसके गुणों से नहीं, बल्कि पैकेज से जाना जाता है। रिश्तों की बुनियाद आज पैकेज के सहारे खड़ी है। तभी तो विवेक और रुचि जो न केवल विगत चार सालों से एक-दूसरे को जानते हैं बल्कि दोनों अच्छे मित्र भी हैं किंतु कमजोर पैकेज उनके बीच दीवार बनकर खड़ा हो जाता है। यहाँ तक कि रुचि कहती थी कि- ''मैं जानती हूँ, हम दोनों को स्ट्रगल करना पड़ेगा। और मैं इसके लिए पूरी तरह से तैयार हूँ। जहाँ तक सुविधाओं की बात है- एक-दो साल में हम दोनों को बहुत अच्छी जॉब मिल जाएगी। दोनों मिलकर आराम से इतना कमा लेंगे कि कम्फर्टेबल जिंदगी जी सकें।''[19] वहीं रुचि, पिता के द्वारा समझाए जाने पर, आगे के जीवन के बारे में कठिनाइयाँ महसूस करने लगती है। कहने लगती है कि- ''हाँ ! विवेक कभी-कभी सोचती हूँ कि यदि मैंने अपने घर वालों की इच्छा के विरुद्ध शादी की तो सबसे कटकर रह जाऊँगी। इतना आसान नहीं है यह। शादी के बाद मुश्किलें और भी हैं।''[20] रुचि के पिता मिस्टर रमेश अरोड़ा भी उन दोनों की शादी में दो दिक्कतें बताते हैं- पहली जाति और दूसरी सैलेरी पैकेज। यद्यपि समय रहते विवेक का पैकेज बढ़ जाता है और कंपनी की ओर से उसे अच्छा फ्लैट भी मिल जाता है किंतु अंत तक न तो उसके पास रुचि का फोन आता है और न ही अब उसे उसके फोन की प्रतीक्षा होती है। इस प्रकार कहानी यह दर्शाती है कि बड़े शहरों के भव्य महलों में रहने पर भी व्यक्ति अपनी पुरानी मानसिकता नहीं त्यागता है। आज भी वह जाति के बंधनों में जकड़ा है, वहीं दूसरी ओर प्रेम तथा नेकदिली पैकेज के समक्ष छोटी पड़ जाती है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि युवा स्त्री कहानीकार स्त्री जीवन से जुड़े मुद्दों के साथ-साथ विभिन्न समसामयिक विषयों को भी अपनी रचनाओं का विषय बनाकर यथार्थ के विविध पहलुओं का उद्घाटन कर रही हैं।

संदर्भ सूची-

1. https://www.rachanakar.org/2013/06/blog-post_7184.html
2. शर्मिला बोहरा जालान : बूढ़ा चाँद, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2008, फ्लैप से।
3. वही, पृष्ठ 53

4. वही, पृष्ठ 63
5. http://www.humrang.com/humrang/ महिला_लेखन
6. वंदना शुक्ल : उड़ानों का सारांश, 'आखेट', अंतिका प्रकाशन, गाजियाबाद, 2013, पृष्ठ 42
7. वही, पृष्ठ 42
8. वही, पृष्ठ 69
9. वही, पृष्ठ 73
10. वही, पृष्ठ 63
11. मनीषा कुलश्रेष्ठ : कुछ भी तो रूमानी नहीं, अंतिका प्रकाशन, गाजियाबाद, प्रथम पेपरबैक संस्करण, 2008, पृष्ठ 27
12. वही, पृष्ठ 35
13. वही, पृष्ठ 37
14. अल्पना मिश्र, छावनी में बेघर, (लिस्ट से गायब), भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2008, पृष्ठ 90
15. वही, पृष्ठ 92
16. अल्पना मिश्र, छावनी में बेघर, (इस जहाँ में हम), भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2008, पृष्ठ 103
17. वही, पृष्ठ 104
18. वही, पृष्ठ 112
19. योजना रावत : *पहाड़ से उतरते* हुए, 'पं पैकेज', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2012, पृष्ठ 32
20. वही, पृष्ठ 38

❑❑❑